“मुजफ्फर अली की फिल्मों मे लखनऊ के समाज का चित्रण”
(फिल्म गमन, उमराव जान, अंजुमन के विशेष संदर्भ में)

एम॰फ़िल॰ नाट्य कला एवं फिल्म अध्ययन विभाग
हेतु प्रस्तुत शोध-प्रबंध
सत्र: 2013-14

ज्ञान शांति मैत्री

निर्देशक
शोधार्थी

प्रो॰ सुरेश शर्मा
अधिष्ठाता एवं विभागाध्यक्ष
सृजन विद्यापीठ
नाट्यकला एवं फिल्म अध्ययन विभाग

मनीष कुमार जैसल
2013/07/204/003
2013-2014

नाट्यकला एवं फिल्म अध्ययन विभाग
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
(संसद द्वारा पारित अधिनियम 1997 क्रमांक 3 के अंतर्गत स्थापित)
पोस्ट मानस मंदिर, गांधी हिल्स, वर्धा-442001 (महाराष्ट्र) भारत
दूरभाष: 07152-251170 बेबसाइट: www.hindivishwa.org

प्रस्तावना

हिन्दी फिल्म जगत में मुजफ्फर अली एक लब्ध-प्रतिष्ठित व्यक्तित्व हैं. एक संवेदनशील और सरोकारी फिल्म निर्देशक के रूप में उन्होने तीन दशक से ज्यादा का वक्त भारतीय सिनेमा को दिया है. साथ ही अपनी विशिष्ट पहचान भी अर्जित की है. सन १९४४ में लखनऊ के एक राजसी परिवार में जन्मे मुजफ्फर की तालीम और तरबियत लखनऊ में ही हुई. इसी वजह से लखनऊ के प्राचीन वैभव एवं समकालीन मूल्यों को उन्होने बेहद करीब से जाना समझा. इसी समझ ने उनके फिल्मों को एक चमत्कारी मौलिकता से नवाज़ा. उनकी बनाई अधिकांश फिल्मों में लखनऊ हमें किसी पात्र की तरह नज़र आता है. जब कभी लखनऊ की पृष्ठभूमि पर बनी फिल्मों की बात होती है मन में पहली छवि मुजफ्फर अली की ही उभरती है. उनकी सबसे पहली फिल्म गमन, उनकी हस्ताक्षर फिल्म उमराव जान और उनकी एक अप्रदर्शित फिल्म अंजुमन इन सभी फिल्मों में लखनऊ अपनी मज़बूत मौजूदगी दर्ज़ करवाता है. यह शोध कार्य इन्ही तीन फिल्मों के विशेष सन्दर्भ में किया जाएगा. हालांकि मुजफ्फर के फिल्म जगत में पदार्पण से पहले भी लखनऊ की पृष्ठभूमि पर चौदहवीं का चांद, पालकी, मेरे महबूब और बहू बेगम जैसी कई बड़ी फिल्में बनी हैं लेकिन लखनऊ के समाज का जैसा प्रभावी चित्रण मुजफ्फर अली की फिल्मों विशेषकर गमन, उमराव जान और अंजुमन में किया गया वैसा अन्यत्र कहीं संभव नहीं हो सका. गमन में रोज़ी रोटी की तलाश में अपने वतन लखनऊ और परिवार से दूर हुए एक निम्न-मध्य वर्गीय आदमी की पीड़ा है लखनऊ बार बार वापस बुलाता है लेकिन बड़े शहर का खूनी पंजा हुए वापस नहीं आने देता. उमराव जान नवाबी के दौर वाले लखनऊ को दिखाती है जिसमें फैज़ाबाद की एक साधारण लड़की अमीरन के लखनऊ की मशहूर तवायफ उमराव जान अदा बनने की दर्द भरी दास्तान है. तीसरी फिल्म अंजुमन लखनऊ के मध्य वर्गीय जीवन का जीवन्त चित्रण करती है. चिकन कारीगरों के शोषण संघर्ष और जीवट को दिखाती ये फिल्म हालांकि आधिकारिक तौर पर रिलीज नहीं हो सकी थी लेकिन आज भी लखनऊ और लखनऊ के बाहर लखनऊ के आम

जनजीवन को समझने के लिए सबसे खूबसूरत फिल्म है. हम अपने शोध में इन्ही तीन फिल्मों में लखनऊ के समाज के चित्रण का बारीकी से अध्ययन करेंगें |

साहित्य पुनरावलोकन-

- गमन फिल्म 1978
- उमराव जान फिल्म 1981
- अंजुमन फिल्म 1986
- उमराव जान अदा: उपन्यास मिर्जा हादी रूसवा कृत
- गुजिश्ता लखनऊ- अब्दुल हलीम शरर
- लखनऊ नामा – योगेश प्रवीण

शोध की प्रासंगिकता (उद्देश्य एवं महत्व)-

१- इन फिल्मों में अलग अलग दौर के लखनऊ के समाज का सूक्ष्म अध्ययन करना |

२- इन फिल्मों में दिखाए गए लखनवी समाज का समकालीन एवं तत्कालीन लखनवी समाज के साथ तुलनात्मक अध्ययन करना |

३- भारतीय फिल्मों में लखनऊ की उपस्थिति का अध्ययन करना |

४- लखनवी पृष्ठभूमि वाली मुजफ्फर अली की फिल्मों में विषय-वैविध्य का अध्ययन करना |

उपकल्पना-

१- मुजफ्फर अली की फिल्मों में लखनऊ की उतनी ही सशक्त उपस्थिति है जितनी कि फिल्म के मुख्य पात्रों की अत: फिल्म में लखनऊ किसी मुख्य पात्र की तरह ही नज़र आता है |

२- मुजफ्फर अली की फिल्मों में दिखाया गया लखनऊ का समाज करीब-करीब उन कालखण्डों के असली लखनऊ के समाज के जैसा ही है|

३- अपनी फिल्मों में मुजफ्फर अली ने लखनऊ के मुस्लिम जन-जीवन, मुद्दों और समस्याओं का स्वाभाविक चित्रण किया है अत: ये सभी फिल्में 'मुस्लिम-सोशल' कही जाने वाली फिल्मों की परंपरा को बखूबी आगे बढ़ाती हैं|

शोध प्रविधि-

१- अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि [चयनित फिल्मों का बारीकी से अध्ययन]

२- साक्षात्कार प्रविधि [मुजफ़्फ़र अली का साक्षात्कार]

उपसंहार

प्रस्तुत शोध **'मुजफ्फर अली की फिल्मों मे लखनऊ के समाज का चित्रण'** मे प्रसिद्ध फ़िल्मकार **मुजफ्फर अली** जो कि लखनऊ के ही रहने वाले हैं और उनकी सोच हमेशा लखनऊ के समाज और वहाँ की संस्कृति को बढ़ावा और मुद्दो को उठाती दिखती है, वैसे इन मुद्दो को समाज मे दिखाने के लिए उन्होने फिल्मों का सहारा लिया और इनकी बनाई सभी फिल्मे लखनऊ की पृष्ठभूमि से ही मेल खाती है या कहे तो उनकी फिल्मों के विषय और कहानी भी पूरी तरफ लखनऊ की सच्ची दास्ताँ वयान करती पायी गयी |

पलायन की समस्या को लेकर बनाई पहली फिल्म **'गमन'** हो, हादी रुसवा के उपन्यास पर आधारित फिल्म **'उमराव जान'** हो या लखनऊ के चिकनकारीगरों के शोषण और संघर्ष की सच्ची कहानी वयाँ करती फिल्म **'अंजुमन'** हो . सभी मे मुजफ्फर अली ने उस दौर के असल लखनऊ के समाज को जगह दी |

प्रस्तुत शोध मे मैंने मुजफ्फर अली द्वारा द्वारा निर्देशित फिल्मों [चयनित फिल्मों] मे चित्रित लखनऊ समाज को असल लखनऊ के समाज साथ तुलनात्मक अध्ययन किया, जिसमे अपने उद्देश्यों को भली भांति पूर्ण पाया, इस शोध का मुख्य उद्देश्य मुज़फ्फ़र अली निर्देशित इन फिल्मों मे लखनऊ के समाज का सूक्ष्म अध्ययन करना था तो मैंने पाया की जिस दौर मे इनकी पहली फिल्म **'गमन'** आई उस दौर के समाज और इनकी दूसरी फिल्म या कहे उनकी हस्ताक्षर फिल्म **'उमराव जान'** मे दिखाये लखनऊ के समाज तथा अप्रदर्शित फिल्म **'अंजुमन'** मे देखे गए लखनऊ मे जो सबसे बड़ा अंतर हैं वह अलग-अलग दौर के लखनऊ के समाज का चित्रण ही है |

दरअसल लखनऊ अपने आप में वो फसाना है जिसे जितना सुनते जाइए उतना ही दिलचस्प होता जाता है. जो भी इसका बयान सुनाता है, एक नई दास्तान सुनाता है, एक शहर जिसका खयाल आते ही ज़हन में तहज़ीब की शमाएं रोशन हो उठती हैं, जिसका जिक्र छिड़ते ही दिल की गलियां गुलशन हो उठती हैं लखनऊ वो तिलिस्म है जिसमें कैद हुआ शख्स कभी

आज़ाद नहीं होना चाहता, जो दुर्भाग्य के कारण यहां से निकल भी जाते हैं वो अपनी आंखों में लखनऊ के मंज़र लिए भटकते हैं और इसकी यादों को अपने कलेजे से हरदम लगाए रहते हैं| वाजिद अली शाह के हवाले से इतिहास गवाह रहा है कि ऐसे दीवाने जहां भी जाते हैं एक नया लखनऊ बसा देते हैं, लखनऊ वाले कहीं भी रहें लखनवी आदाब कभी नहीं भुलाते| इसी धारणा से एकदम मेल खाती 1978 मे बनी फिल्म गमन मे अली साहब ने एक व्यक्ति **'गुलाम'** जो रोजी रोटी कमाने के लिए अपना शहर, अपना परिवार छोड़ उसे बड़े शहर की तरफ जाना होता है और फिर आखिर तक वो अपने शहर को दिल का दिल मे बसाये ही रह जाता है पर बड़े शहर का खूनी पंजा और रोजी रोटी के जाल मे फ़सा गुलाम घर आने के लिए तरसता रहता है, गुलाम के साथ साथ यही समस्या लगभग पूरे ग्रामीण लखनऊ के मध्यम वर्गीय समाज की भी थी जिसे फिल्म मे गुलाम व उसके परिवार को केन्द्रित करते हुए दिखाया गया है| वहीं 1981 मे लखनऊ की मशहूर तवायफ़ **'उमराव जान अदा'** पर बनी फिल्म उमराव जान मे मुजफ्फर अली ने 1857 के आस पास के लखनऊ के समाज मे महिलाओं की स्थिति, नवाबों के शौक, संगीत के प्रति दिलचस्पी, तथा उस दौर के गज़ल, शेरों शायरी, मे लोगो के लगाव को पेश किया, हालांकि मशहूर तवायफ़ उमराव पर बनी फिल्म मे उमराव जान को केन्द्रित कर तवायफ़ों की निजी ज़िंदगी से जुड़े सवालों को उठाने का प्रयास किया| 1986 मे बनी फिल्म 'अंजुमन' मे नब्बे के दशक मे लखनऊ के मध्य वर्गीय समाज के जीवन तथा चिकन कारीगरों के शोषण की कहानी बताती है . वैसे फिल्म भारत मे तो रिलीज नहीं हो पायी पर मुजफ्फर अली से लिए साक्षात्कार मे उन्होने फिल्म अंजुमन के विदेशों मे प्रदर्शित होने की बात स्वीकारी है|

शोध का दूसरा उद्देश्य फिल्मों इनकी फिल्मों मे दिखाये गए लखनवी समाज का तत्कालीन और समकालीन समाज के साथ तुलना करने मे मैंने पाया की मुजफ्फर अली की तीनों फिल्मों मे दिखाये अलग अलग दौर के लखनवी समाज और आज के लखनवी समाज मे बहुत ज्यादा अंतर नहीं पाया गया, हालांकि बाजारवाद ने और सभी शहरों को काफी बदला हैं पर लखनऊ की शान आज भी **'पहले आप'** आपकी संस्कृति है. इमामबाड़े, कत्थक, ठुमरी,

मर्सिये, सूफियाना माहौल, गजल आदि आज भी लखनऊ की अपनी महचन बनाए हुए हैं जो उस दौर के लखनऊ की शान हुआ करते थे | वास्तव में लखनऊ अपनी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत को हृदय से लगाए हुए अपने समय से कदम मिला रहा है, जिस तरह हर दिन व्यक्ति के कपड़े बदलने मात्र से उसकी आत्मा में कोई परिवर्तन नहीं होता इसी तरह समय के अनुसार इस शहर में हुए तमाम बाहरी परिवर्तनों के बाद भी लखनऊ की रूह और उसके किरदार में ज़रा भी तब्दीली नहीं हुई है. लखनऊ अगर बदला भी है तो बेहतरी के लिए बदला है |

अगर बात करे शोध के तीसरे उद्देश्य की तो हिन्दी सिनेमा मे लखनऊ की उपस्थिति की तो पहले से ही **चौदहवीं का चांद**, **पालकी**, **मेरे महबूब**, **बहू बेगम** और **शतरंज के खिलाड़ी** जैसी बड़ी फिल्मे बन चुकी हैं इसके बावजूद अगर कोई लखनऊ की पृष्ठभूमि पर कोई फिल्म देखना चाहेगा तो उसकी जुबान पर सबसे पहले मुजफ्फर अली की उमराव जान का नाम आता है | इनकी बनाई फिल्मे आज भी पूरे हिन्दी सिनेमा के इतिहास मे याद की जाती हैं कारण खुद मुजफ्फर अली की फिल्म को बनाने की प्रक्रिया जो हमने शोध प्रबंध मे बतायी है|

लखनऊ है तो महज़ गुम्बद-ओ-मीनार नहीं
सिर्फ एक शहर नहीं, कूचा-ओ-बाज़ार नहीं
इसके दामन में मोहब्बत के फूल खिलते हैं
इसकी गलियों में फरिश्तों के पते मिलते हैं !

जैसी मेरी स्वयं की उपकल्पना इस शोध विषय को लेकर थी, उसके अनुसार साहित्य मे लिखे उस दौर के लखनऊ तथा इनकी फिल्मों मे दिखाये गए लखनऊ के दौर के साथ तुलना करने मे पाया गया की फिल्मों मे दिखाया गया समाज तथा फिल्म का विषय उन दिनो के लखनऊ के समाज के जैसा ही है . ये सभी फिल्में अलग अलग दौर तथा उसी दौर के समाज की एक स्पष्ट तस्वीर पेश करती नज़र आ रही है | मैंने देखा की इनकी सभी फिल्मों मे अन्य पात्र की तरह लखनऊ भी एक पात्र की भूमिका निभा रहा है जो शायद लखनवी पृष्ठ भूमि पर बनी अन्य फिल्मों से इसे अलग बनाती है | मुजफ्फर अली ने खुद लखनऊ को जिया है वहाँ के दर्द मे अपने आप को महसूस किया और उसे समाज मे सिनेमा के माध्यम से दिखाया, मेरी एक और

उपकल्पना जिसमे मैंने इनकी तीनों फिल्मों मे पाया की ये फिल्मे मुस्लिम-जनजीवन, मुद्दो और उनकी परंपरा को आगे बढ़ाती दिखती हैं |

मुजफ्फर अली की इन फिल्मों के अभिनेता/ अभिनेत्री पूरी तरह फिल्म के पात्रो मे पूरी तरह डूबे हुए देखे जा सकते हैं चाहे फिर वो**उमराव जान** की **'रेखा'** और **'फ़ारुख शेख'** हो, या **'गमन' मे** गुलाम की भूमिका मे **'फारुख शेख'** और **'खैरून'** की भूमिका मे **स्मिता पाटिल** हो या फिर इनकी एक और फिल्म **'अंजुमन'** मे अंजुमन की भूमिका मे शबाना आज़मी हो | इसके साथ ही मुजफ्फर अली निर्देशित तीनों फिल्मों मे फ़ारूख शेख मुख्य पात्र की भूमिका मे नज़र आए, इस सिलसिले मे मे **मुजफ्फर अली से किए साक्षात्कार** मे उन्होने बताया की फ़ारूख साहब हमारी फिल्मों के पात्रों के अनुसार फिट लगते थे इस कारण हमने उन्हे अपनी फिल्मों मे बतौर अभिनेता रखा |

फिल्म मे प्रयोग किए गए अवधी संवाद, ठुमरी, मर्सिये, नवाबी राजठाट, वेश भूषा, खान पान, गज़ल, शेरो शायरी मुख्यतः फिल्म गमन मे मखदूम मोहिउद्दीन की गज़ल आपकी याद आती रही रात भर और फिल्म अंजुमन मे मशहूर शायर फैज अहमद फैज और शहरयार की गज़लें उन फिल्मों की सफलता का कारण हैं जिसे फिल्म की अभिनेत्री शबाना आज़मी ने अपनी आवाज ने गाया है | वहीं हादी रुसवा के उपन्यास उमरावजान अदा पर आधारित फिल्म उमराव जान मे असल ज़िंदगी मे उमराव के कहे शेरो का इस्तेमाल फिल्म को अपनी पहचान देता हैं |

प्रस्तुत शोध मे पाया गया की मुजफ्फर अली का व्यक्तित्व और कृतित्व पूरी तरह से लखनऊ के लिए समर्पित रहा हैं. लखनऊ के दर्द और अवध की संस्कृति के दीवाने मुजफ्फर साहब हमेशा अपनी फ़िल्मकारी से लखनऊ या कहे पूरे अवध की शानो शौकत को आज भी जिंदा बनाए रखने की पूरी कोशिश की हैं| शोध लेखन के दौरान लिए गए साक्षात्कार मे पता लगा की मुजफ्फर अली फिर लखनऊ की पृष्ठभूमि पर एक और फिल्म रश्क बना रहे हैं, आने

वाले दिनों मे लखनऊ के समाज और उनसे जुड़ी संस्कृति को सिनेमाई भाषा मे देखने वालों के लिए एक खुशखबरी की ही बात होगी |

परिशिष्ट